International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 21-06-2021, Accepted: 03-07-2021, Published: 21-07-2021
Volume 7, Issue 4, 2021, Page No. 49-51

दीन दयाल उपाध्याय के आर्थिक विचारों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता

सन्नी शुक्ला
शोधार्थी, दीन दयाल उपाध्याय पीठ, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश, भारत

सारांश
दीन दयाल उपाध्याय का आर्थिक चिंतन आज के समय के लिए अत्यंत उपयोगी, सामयिक तथा महत्त्वता का विषय है। आज के परंपरागत अकादमिक दृष्टि से दीन दयाल उपाध्याय अर्थशास्त्री नहीं थे, इस से भी बढ़कर थे। अर्थ चिंतक होने के साथ ही उनका व्यक्तित्व समाजसेवी भाव से भरा हुआ था। देश और समाज की व्यवहारिक समस्याओं का गहन अध्ययन के उपरांत भारत की वर्तमान स्थिती के हिसाब और व्यावहारिक रूप से अर्थ चिंतन के क्या सूत्र हो सकते हैं, इस संबंध में पंडित दीन दयाल उपाध्याय का बहुत उपयोगी मार्गदर्शन हम सभी को प्राप्त होता है। जब भारत की दो पंचवर्षीय योजना पूरी हो गई तो योजना की संकल्पना, अवश्यकता, दृष्टि और दिशा को लेकर उन्होंने बहुत ही प्रमाणिक सारगर्भित टिप्पणी करने वाली एक पुस्तिका 'भारतीय अर्थनीति–विकास की एक दिशा' लिखी थी। जो कि अर्थ चिंतन के विषय में बहुत महत्व रखती है। वे कहा करते थे कि भारत को एडम स्मिथ, मार्शल, मार्क्स, केंज की अर्थ चिंतन की जकड़न से बाहर निकल के भारतीय अर्थ चिंतन के बारे में विचार करना चाहिए। साथ ही पंडित जी सामान्य तौर से बोला करते थे कि भारत इतना सनातन, पुरातन और समृद्ध देश रहा है तो इस देश का अपना कोई अर्थ चिंतन, तंत्र, व्यवहार और दृष्टि जरूर रही होगी। आज के समय में उसका भी अध्ययन आवश्यक है। इन दो आयामों को लेकर दीन दयाल उपाध्याय ने अपने विचार प्रस्तुत किए। किसी भी विषय, सिद्धांत, नई रचना, व्यवस्था के बारे में विचार करते हैं तो विश्व दृष्टि का विचार करना पड़ता है। उन्होंने कहा कि पश्चिम में खंडित, यांत्रिक विश्व दृष्टि के आधार पर सैद्धांतिक रचनाएं गढ़ी गई हैं। वो मनुष्य को सुख नहीं दे सकती और न ही मनुष्य का कल्याण कर सकती हैं। आज वर्तमान समय की भी यही जरूरत है कि समग्र, समन्वयित और एकात्म विश्व दृष्टि के आधार पर आगे बढ़ा जाए। दीन दयाल का यह मानना था कि हमें अपनी पुरानी सनातन परंपरा को बिल्कुल भी न भूलाकर युकानुकूल रचना बनानी है। वर्तमान समय के सवालों का जबाव देने के लिए, उत्पन्न हुई समस्याओं का समाधान करने के लिए हमें आज की परिस्थितियों के अनुसार ही राष्ट्रहित में विचार करना होगा। हमारा अर्थतंत्र किस तरह से राष्ट्र के विकास में अपनी भूमिका सुनिश्चित कर सकता है यह वर्तमान समय में अकादमिक स्तर पर शोध का विषय बन चुका है। पश्चिमी देशों की चकाचौंध का अंधभक्त बनकर अनुसरण करने से बचते हुए अपने देश के जीवन मूल्यों के आधार पर देश की अर्थ रचना को आगे बढ़ाने में पंडित दीन दयाल उपाध्याय का अर्थ चिंतन बहुत महत्व रखता है। आर्थिक योजनाओं तथा नीतियों को बनाते समय प्रजातंत्र तथा सांस्कृतिक मूल्यों को ध्यान में रखना भारतीय अर्थतंत्र का उद्देश्य होना चाहिए। दीन दयाल उपाध्याय ने एक समाज अर्थ चिंतक के रूप में बहुत सारगर्भित सूत्रो को हम सभी के समक्ष रखा है जो कि राष्ट्र के विकास तथा समृद्धि में अवश्य ही उपादेय साबित होंगे।

मूलशब्द: अर्थ, आर्थिक, समाज, मानव, राष्ट्र

प्रस्तावना
पंड़ित दीन दयाल उपाध्याय भारतीय राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक चिंतन को वैचारिक दिशा देने वाले पुरोधा थे। दीन दयाल का सपष्ट मानना था कि समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद व्यक्ति के एकांगी विकास की बात करते हैं। जबकि व्यक्ति की समग्र जरूरतों का मुल्यांकन किए बिना कोई भी विचार भारत के विकास के अनूकूल नहीं होगा। दीन दयाल उपाध्याय ने तत्कालीन कांग्रेस सरकार अर्थात पंड़ित नेहरू की नीतियों का ना सिर्फ विरोध किया बल्कि उस विरोध के साथ–साथ वैकल्पिक वैचारिक मॉडल भी प्रस्तुत किया। पंडित दीन दयाल उपाध्याय का दृष्टिकोण सिर्फ विरोध का नहीं बल्कि रचनात्मक भी था। जिस बिंदू पर इनका विरोध होता था, उस बिंदू पर उनके पास विकल्प की दृष्टि भी होती थी। उन्होंने समाजवाद, मार्क्सवाद और पूंजीवाद को भारतीय दृष्टिकोण के अनुकूल 'एकात्म मानवदर्शन' का वैचारिक दर्शन प्रस्तुत किया।
पूंजीवाद और साम्यवाद दो ऐसी विश्व व्यवस्थाएं जो कि भौतिकवादी चिंतन से पैदा हुई। असीमित उत्पादन और असीमित उपभोग को सुख का आधार मानते हुए इन विचारधाराओं ने तकनीकी उन्नति के सहारे असीमित उत्पादन के तरीके खोजे और प्रकृति के सीमित संसाधनों का मनमाना उपभोग प्रारंभ किया। दोनों का आधार द्वैतवाद अर्थात संघर्ष है। इसके कारण समाज भू–स्वामी और पूजारों, जमींदार और किसान, पूंजीपति और मजदुर तथा शोषक और शोषित के वर्गो में बंट कर रह गया। पूंजीवाद के विरोध में साम्यवाद पैदा हुआ था। दोनों मे केवल अंतर इतना दिखता है कि पूंजीवाद पूंजी के निर्माण, विनिमय और उपभोग पर पूंजीपति का एकाधिकार स्वीकार करता है। जबकि समाजवाद यह अधिकार सरकार अथवा शासक तंत्र को दे देता है। दोनों अवस्थाओं में मजदुर, किसान शोषित रहता है, इसलिए संघर्ष होता है।

अर्थायाम की परिकल्पना
दीन दयाल उपाध्याय जी का मानना था कि किसी भी देश की दिशा और दशा उस देश की आर्थिक नीतियों से निर्धारित होती है। 'जिस तरह की आर्थिक नीतियों को देश में लागू किया जाएगा उसी तरह से देश उन्नति की राह पे चलेगा या दुर्गति की राह पर। उपाध्याय जी ने मनुष्य और राष्ट्र के जीवन में आर्थिक समृद्धि के महत्व को पहचानते हुए भारतीय अर्थनिति के विभिन्न आयामों को स्पष्ट किया और उसे अर्थायाम का नाम दिया।'[1] पंडित जी का अर्थायाम भारतीय संस्कृति को परिभाषित करते हुए अर्थ संस्कृति का आयाम स्थापित करता है। उपाध्याय जी का अर्थायाम दो मूलभूत अवधारणाओं पर आश्रित है। उनका मानना था कि अर्थ का अभाव और अर्थ का प्रभाव दोनों ही

व्यक्ति और राष्ट्र के लिए घातक हैं।

अर्थ के अभाव में मनुष्य अपने मानवीय दायित्व नहीं निभा पाता, जीवन यापन नही कर सकता, धनवानों का विरोध नहीं कर पाता । 'अर्थ के अभाव में उसके सद्गुण नष्ट हो जाते हैं।'[2] अजीविका के साधनों का अभाव अथवा बेकारी, आर्थिक पराधीनता, राष्ट्रों की राजनीतिक पराधीनता का कारण भी बनती है।

अर्थ के प्रभाव से अभिप्राय व्यक्तिगत जीवन और राष्ट्रीय जीवन में अर्थ को सर्वोच्च अधिमान दिया जाना। 'व्यक्तिगत रूप से धन को सब कुछ मानने वाला व्यक्ति, धन कमाने के लिए, धन संग्रह के लिए गलत उपाय ढूंढेगा, विलासिता में डूबकर अपनी आत्मा का नाश करेगा।'[3] धन के प्रभाव में पड़ा राष्ट्र अपने यहां शोषण प्रक्रिया को वैद्य मानने लगेगा। अपनी असीम इच्छाओं की पूर्ती के लिए औपनिवेशिक और आर्थिक सम्राज्यवाद का सहारा लेगा, दूसरों पर युद्ध थोपेगा, अपने द्वारा निर्मित शस्त्रास्त्रों की बिक्री से धन कमाने हेतू, कमजोर राष्ट्रों को लड़वाएगा और विश्व व्यवस्था को अस्थिर करेगा। इस प्रकार धन का प्रभाव भी व्यक्ति और राष्ट्र के लिए समान रूप से विनाशकारी होगा। अर्थायाम को परिभाषित करते हुए पंडित दीन दयाल जी ने कहा, 'अर्थ के अभाव और अर्थ के प्रभाव दोनों से समाज जीवन को मुक्त रखकर समाज में संपति के बारे में एक योग्य व्यवस्था निर्मित करने को भारतीय संस्कृति में अर्थायाम कहा गया है।'[4] साथ ही उन्होंनें सपष्ट किया कि अर्थ के उत्पादन, स्वामित्व, वितरण तथा भोग की समुचित एवं संतुलित व्यवस्था अर्थायाम का प्रमुख अंग है। अर्थायाम के चार प्रमुख बिंदु पंडित दीन दयाल उपाध्याय द्वारा राष्ट्र के समक्ष रखे हैं।

अर्थव्यवस्था की प्रेरणा

पंडित जी के अनुसार, 'लोगों का पालन पोषण, जीवन तथा राष्ट्र की धारणा एवं विकास के लिए जो मूलभूत साधन होते हैं, उनका उत्पादन करना अर्थव्यवस्था का लक्ष्य होना चाहिए।'[5] उत्पादन की प्रेरक शक्ति आम आदमी की न्यूनतम अवश्यकताओं की पूर्ती होना चाहिए।

संपत्ति का स्वामित्त्व

दीन दयाल उपाध्याय जी का सपष्ट मानना था कि समाजवाद और पूंजीवाद दोनों प्रकार की आर्थिक व्यवस्थाओं में केंद्रीयकरण और तानाशाही का जन्म होता है और किसान मजदूर का शोषण होता है। उपाध्याय जी के अनूसार, 'राष्ट्र की संपति न तो केवल श्रमजन्य 'अतिरिक्त मूल्य' का परिणाम है न ही केवल पूंजीपति के उद्यम और निवेश का फल है।'[6] किसी भी राष्ट्र के प्राकृतिक साधन संपूर्ण राष्ट्र के होते हैं, जिस तकनीकी विकास के सहारे बड़े उधोग स्थापित होते हैं, उसे समस्त समाज नें विकसित किया होता है, इसलिए संपति पर पूंजीपति, श्रमिक और समाज का मिलाजुला अधिकार या स्वामित्व रहना चाहिए।

उत्पादन की सीमा क्या हो

आधुनिक औद्योगीकरण का परिणाम यह हुआ है कि उत्पादन आवश्यकता या मांग आधारित न रहकर तकनीक विकास आधारित हो गया है। 'अधिकतम उत्पादन उसके सहारे किया जाता है और फिर उसे खपाने के लिए विज्ञापन आदि का सहारा लिया जाता है। पश्चिम का मानना है कि मानव की असीम इच्छाओं की पूर्ती के लिए असीम उत्पादन करना उसका अधिकार है।'[7] परंतु उत्पादन तो प्रकृति पर निर्भर है। प्रकृति से प्राप्त खनिज, उपज, उर्जा के साधन सीमित हैं। भयंकर प्रदूषण का कारण भी अंधाधुंध हो रहा औधोगीकरण होगा। कृषि भूमि में रासायनिक उर्वरक डालकर आज अधिक उपजा लेंगे, पर कल वह जमीन विषैले होकर जहर उगलेगी। इससे बचने का उपाय उपाध्याय जी के अनुसार भारतीय संस्कृति के पास है और वह है 'संयमित उपभोग'।

अर्थायाम का मानवीय उदेश्य

पश्चिम के नारों में उन्हें घोर स्वार्थ की गंध आती है। कमाने वाला खाएगा नारा पश्चिमी भौतिकवाद से पैदा हुआ है जो कि पशुधर्म है। भारतीय परंपरा तो कहती है कि 'चोंच दियो तब चंच भी देहि' अर्थात जो पैदा हुआ है वो खाएगा भी। 'अर्थतंत्र को चाहिए कि वह सबको काम का अधिकार दे ताकि वे कमा सके और जी सके। हमारा नारा होना चाहिए जो कमाएगा सो खिलाएगा अर्थात कमाने वाला अपने परिवार और परिजनों की रक्षा का दायित्व अपने उपर लेगा। अर्थायाम ऐसा होना चाहिए कि उत्पादन जनित विपुलता का फल सभी चख सकें। भारतीय मजदूर संघ का नारा 'राष्ट्रहित में करेंगे काम, काम का लेंगे पूरा दाम' सामने आया। साम्यवादियों का नारा 'चाहे जो मजबूरी हो, मांग हमारी पूरी हो' स्वार्थभाव को दर्शाता है।'[8] आर्थिक नीतियों का संचालन तथा निर्माण मानव के कल्याण के लिए होना चाहिए, जिससे देश भी आर्थिक रूप से समृद्ध बनेगा।

उत्पादन और उपभोग

लागों के भरण पोषण के लिए जीवन के विकास के लिए राष्ट्र की धारणा एवं विकास के लिए जिन मौलिक साधनों की अवश्यकता होती है। उनका उत्पादन अर्थव्यवस्था का लक्ष्य होना चाहिए। पंडित जी के अनुसार, 'आज स्थिती यह हो गई है कि बाजार के लिए माल पैदा करने के स्थान पर पैदा किए हुए माल के लिए, बाजार ढूंढना न मिले तो नया बाजार पैदा करना आज की अर्थनीति का प्रमुख अंग बन गया है।'[9] हम वर्तमान समय में अक्सर देख सकते हैं कि विभिन्न कंपनियों के द्वारा किस तरह से विज्ञापन का सहारा लेकर अपने उत्पादों को बाजार में उतारा जाता है और विज्ञापन के बाजार में बिकते हुए किरदार उनकी इस मांग को पूरा करते हैं। पुराना फेंको और नया खरीदो, नया खरीदने की चाह उपभोक्ता में पैदा करना, मांग पूरी करना नहीं, मांग पैदा करना यही आज अर्थव्यवस्था का लक्ष्य हो गया है। उत्पादन का संबंध प्राकृतिक साधनों से भी है। 'यदि अंधाधुंध उत्पादन बढ़ाते गए तो यह प्राकृतिक साधन भी कब तक साथ देंगे। यदि बड़ी तेजी के साथ और अनावश्यक रूप से हम उसका अपव्यय करते गए तो एक दिन हमें पछताना पड़ेगा। भारत में प्रकृति को 'माता' का दर्जा दिया गया है।'[10] भारत ही एक ऐसा देश है, जहां पेड़ पौधों की भी पूजा हो होती है, नदियों को पवित्र माना जाता है और उनको भी पूजा जाता है। हमारे यहां भारतीय परंपरा के अनुसार प्रकृति को प्रदूषित करना पाप है। यह दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में हम अपने पुरातन मूल्यों और नियमों को भूल कर अंधाधुंध औधोगीकरण और विकास की चकाचौंध में प्रकृति के साथ अनुचित व्यवहार कर रहे हैं और जिसके दुष्परिणाम आज हम देख भी सकते हैं। वर्तमान समय मे प्रदूषण से जनता का हाल बेहाल होना इसी का परिणाम है। पेड़ पौधों को काटना और पहाड़ों को काटना आने वाली पीढ़ी के लिए खतरनाक होने वाला है। यह सृष्टि केवल व्यक्ति और समाज से नहीं बनती, मानव को प्रकृति के साथ समुचित व्यवहार करना सीखना चाहिए। दीन दयाल उपाध्याय जी का मानना है, 'इस दृष्टि से अगर विचार किया जाए तो कहना होगा कि हमारी अर्थव्यवस्था का लक्ष्य अमर्यादित उपभोग नहीं संयमित उपभोग होना चाहिए।'[11] प्रकृति का शोषण नहीं, दोहन हमारा आधार होना चाहिए। प्रकृति का स्तन्य हमारे लिए जीवनदायी हो ऐसी ही व्यवस्था करनी चाहिए।

कर्तव्य और अर्थव्यवस्था

कमाने वाला खाएगा यह नारा समान्यतः तो कम्युनिस्ट लगाते हैं किंतु पूंजीवादी भी इस नारे के मूल में निहित सिद्धांत से असहमत नहीं होते। यदि दोनों में झगड़ा है तो इसी बात का कि कौन कितना कमाता है। 'पूंजीवादी साहस और पूंजी को महत्व

देते हैं, इसलिए खाने में उनका प्रमुख भाग रहा तो उसे वे उचित मानते हैं। दूसरी ओर कम्युनिस्ट श्रम को ही निर्माण मानते हैं, इसलिए श्रमिक को वे खाने का अधिकार देते हैं। यह दोनों ही विचार ठीक नहीं। वास्तव में हमारा नारा होना चाहिए कमाने वाला खिलाएगा तथा जो जन्मा सो खाएगा।'[12] खाने का अधिकार जन्म से प्राप्त होता है। समाज में जो कमाते नहीं वे भी खाते हैं। बच्चे बूढ़े रोगी अपाहिज सबकी चिंता समाज को करनी पड़ती है। प्रत्येक समाज में इस कर्तव्य के निर्वाह की तत्परता रहती है। इस कर्तव्य के निर्वाह की क्षमता पैदा करना ही अर्थव्यवस्था का काम है। मनुष्य अपने इस कर्तव्य के निर्वाह के लिए काम करता है अन्यथा जिनकी भूख मिट गई है, काम ही नहीं करेंगे। जिस 'भरत' के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा है, उनकी व्याख्या भी यही है कि 'भरणात् रक्षणात् च' अर्थात भरण और रक्षण के कारण वह 'भरत' कहलाता था। उसका यह देश भारत है, इस देश में भरण–पोषण की गारंटी न रही तो भारत नाम सार्थक नहीं होगा। आज की परिस्थिति में यदि किन्ही दो शब्दों का प्रयोग कर अपनी अर्थव्यवस्था की दिशा के परिवर्तन को बताना हो तो वे हैं विकेंद्रीकरण और स्वदेशी। दीन दयाल उपाध्याय जी का स्पष्ट मानना था, 'उद्योगों का विकेंद्रीकरण कर कुटीर और ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहन देकर हम अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत कर सकते हैं। इन उधोगों को आधार बनाकर बड़े उधोगों को उनके साथ समन्वित किया जाए । वे एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी न बने, इसका विशेष ध्यान रखा जाए।'[13] हमारा केंद्र मनुष्य होना चाहिए । मनुष्य को काम मिले और वह सुखी रहे यही हमारा उद्देश्य होना चाहिए। मशीन मनुष्य की सुविधा के लिए है, उसका स्थान लेने के लिए नहीं। मनुष्य मशीन का निर्माता है, उसका स्वामी है, उसका गुलाम नहीं। भारत में कुटीर और लघु ग्रामोद्योग ही हमारा केंद्र होने चाहिए।

वर्तमान केंद्र सरकार द्वारा प्रयास

वर्तमान समय में केंद्र सरकार के द्वारा इस ओर उचित कदम उठाए जा रहे है हम देख सकते हैं कि 'प्रधानमंत्री कौशल विकास' तथा 'स्किल इंडिया' के माध्यम से छात्रों को इस योग्य बनाया जा रहा है कि वह अपने हुनर और कौशल का सही विकास कर उसके माध्यम से अपनी अजीविका के अवसर प्राप्त कर सकें। आज महाविद्यालयों में वोकेशनल शिक्षा भी दी जा रही है और छात्रों को प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है तो यह केंद सरकार का एक उचित एवं सराहनीय कदम है। इसका लाभ लेकर छात्र इस योग्य हो रहा है कि वो अपने हुनर को और प्रभावी बना कर अपनी क्षमता के अनुसार स्वयं का व्यवसाय भी शुरू कर रहा है। देश की आर्थिक स्थिती को सुदृढ़ करने के लिए स्वदेशी को प्रोत्साहन देना बहुत अवश्यक हो जाता है। स्वदेशी के भावनात्मक रूप को समझकर हमें उसे सृजन का आधार एवं अवलंब बनाना चाहिए। स्वदेशी का भाव हमारे रहन सहन, खान पान, पहनावे और काम काज में भी दिखना चाहिए। हम र्वतमान समय में यह देखते हैं कि कहीं न कहीं हम इस भाव को पीछे छोड़ रहें है और पश्चिम की ओर ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं। इस ओर चिंतन करना आज के समय में अति अवश्यक हो चुका है। स्वदेशी का भाव हमारे कार्यालयों की भाषाओं में भी दिखना चाहिए। हमारी राष्ट्रीय भाषा हिंदी है पर कार्यालयों में अधिकतम काम आज भी अंग्रेजी भाषा में होते हैं। सरकारी कार्यालयों में तो कम से कम यह तय कर देना चाहिए कि सभी उत्पाद स्वदेशी ही उपयोग में लाने होंगे। विदेशी माल पर नियंत्रण कर स्वदेशी को प्रोतसाहन दिया जाए। देश का विकास तथा प्रगति उस देश की आर्थिक नितियों पर ही निर्धारित होती है। आर्थिक रूप से अगर देश समृद्ध है तो वह देश विकासशील देश साबित होगा। वर्तमान समय में भारत की केंद्र सरकार की आर्थिक नितियां, दीन दयाल उपाध्याय के चिंतन से प्रेरित हैं। वर्तमान भाजपा सरकार की विनिवेश की नीति, मेक इन इंडिया, स्टार्ट–अप स्थापित करने की नीति, अंत्योदय कार्यक्रम, गरीब के घर में गैस चूल्हा देना, देश के मूलभूत ढ़ांचे को तेजी से विकसित करना, स्वदेशी को बढ़ावा देना, कृषकों के लिए कृषि बीमा, सस्ते ऋणों की योजना, प्रधानमंत्री कौशल विकास एवं स्किल इंड़िया जैसी असंख्य योजनाएं इसी चिंतन का परिणाम हैं। पूर्व में जनसंघ और वर्तमान मे भाजपा ने 'एकात्म मानवदर्शन' को अपना वैचारिक अधिष्ठान घोषित किया है, इसलिए अपनी सरकार की नीतियों को इस चिंतन पर आधारित करना स्वभाविक ही है।

संदर्भ सूची

1. दीन दयाल उपाध्याय, भारतीय अर्थनीति विकास की एक दिशा, राष्ट्र धर्म, पुस्तक प्रकाशन
2. एकात्म मानव दर्शन, दीन दयाल शोध संस्थान, अर्थनीति का भारतीयकरण
3. एकात्म मानव दर्शन, अध्याय 12, अर्थनीति का भारतीयकरण
4. दीन दयाल उपाध्याय, विकेंद्रीयकरण की विडंवना, अध्याय 4, राष्ट्र जीवन के अनुकूल अर्थव्यवस्था
5. एकात्म मानव दर्शन, युगानुकूल अर्थरचना
6. एकात्म मानव दर्शन, युगानुकूल अर्थरचना
7. दीन दयाल उपाध्याय, भारतीय जनसंघ की अर्थनीति
8. एकात्म मानव दर्शन, युगानूकूल अर्थरचना
9. राष्ट्र जीवन के अनूकूल अर्थरचना
10. डा महेश शर्मा, दीन दयाल उपाध्याय, कर्तृत्व एवं विचार
11. पं दीन दयाल उपाध्याय, विचार और दर्शन, खंड 4, एकात्म अर्थनीति
12. दीन दयाल उपाध्याय, राष्ट्र चिंतन, अर्थनीति का भारतीयकरण
13. दीन दयाल उपाध्याय, भारतीय अर्थनीति विकास की एक दिशा, छोटे उद्योग और बड़े उद्योगं